वर्तमान परिप्रेक्ष्य में भक्ति कालीन काव्य का महत्व

26

डॉ. शुभा माहेश्वरी*

सारांश

हिन्दी साहित्य के आधुनिक युग को समझने के लिए मध्यकाल को समझना आवश्यक है। वर्तमान परिप्रेक्ष्य में शाश्वतता व प्रासंगिकता –दोनों दृष्टियों से भक्तिकालीन काव्य साध्य है। समृद्धता, व्यापकता और उत्कृष्टता भक्तिकाल का सबसे बड़ा वैशिष्ट्य है। भारत की आधुनिक भाषाओं के व्यक्तित्व चरित्र एवं अस्मिता को प्रथम बार परिभाषित करने वाला भक्ति कालीन काव्य है। मानवीय मूल्यों का प्रकर्ष, आधुनिकता बोध का सूत्रपात, नारी स्वातंत्र्य पर बल ,कलात्मक सौन्दर्य बोध आदि ऐसी विशेषताएं भक्तिकालीन काव्य में है जो उसे कालजयी बनाती हैं। मानवीय मूल्यों के संरक्षण की दृष्टि से, सामाजिक समरसता की दृष्टि से, जातीय अस्मिता की दृढ़ता की दृष्टि से, कला –कौशल की दृष्टि से तथा वस्तु की दृष्टि से भक्तिकालीन काव्य साध्य है अतः उसकी महत्ता अक्षुण्ण है।

मूल शब्द

आशा, प्रेरणा व प्रेम की अजस्र धारा से प्रवहमान भक्तिकालीन काव्य वर्तमान परिप्रेक्ष्य में सार्थक।

"सहितस्य भावं साहित्यं"। साहित्य में ऐसी प्रवाहमयता होती है जो जीवन का भावार्थ होती है। मानव–जीवन की श्रेष्ठता और अस्तित्व के मूल्यों का उद्घाटन इसी भावार्थ के द्वारा किया जाता है। साहित्यकार जब मानवीय व्यापार एवं संवेदनाओं को अपनी रचनात्मक अन्तर्दृष्टि द्वारा पुनः सषजित करके उसे सुन्दर रूप देता है, तब ऐसा साहित्य हमें संस्कारित करता है, हमारी उदात्तता में वृद्धि करता है तथा हमारा आत्मबल बढ़ाकर हमें अपनी आन्तरिक शाक्तियों को चीन्ह कर उसके अनुसार कार्य करने की प्रेरणा एवं समझ देता है। ऐसा ही सार्थक साहित्य शाश्वत कहलाता है।

किसी साहित्य की प्रासंगिकता से तात्पर्य है कि पूर्व में रचा गया साहित्य वर्तमान एवं भविष्य के अध्येताओं को कहॉ तक परिमार्जित, परिष्कृत कर पाता है, ऐसा साहित्य मानव जीवन के विविध आयामों को तथा समग्र रूप में जीवन को समझने में कहॉ तक सहायता कर पाता है। अपने समाज व देश को समझने, जॉचने –परखने तथा उसमें सकारात्मक परिवर्तन करने के लिए कितनी भूमिका का निर्वहन कर पाता है यह भी साहित्य की प्रासंगिकता को मापने का मापदण्ड होता है ।

वर्तमान परिप्रेक्ष्य में जब हम भक्तिकालीन काव्य पर दृष्टिपात करते हैं तो शाश्वतता व प्रासंगिकता – दोनों दृष्टियों से यह काव्य साध्य है। वर्तमान समय के क्रम में भक्तिकालीन काव्य पर विचारते हुए सर्वप्रथम यह जानना आवश्यक हो जाता है कि भक्तिकाल के अध्ययन

*एसोसिएट प्रोफेसर एवं अध्यक्ष, हिन्दी विभाग, साहू जैन कॉजेज, नजीबाबाद

की आवश्यकता वर्तमान समय में क्यों ? इसके अनेक कारण हैं। पहला कारण है कि वैज्ञानिक उपलब्धियों को सर्वोपरि मानने वाले भौतिक वादी लोग भक्ति कालीन काव्य को हताश जनता की कुण्ठाग्रस्त अभिव्यक्ति मानकर आज के संदर्भ में उसे उपयोगहीन मान लेते हैं। कतिपय उत्तर आधुनिक इस काव्य को ईश्वर की मष्त्यु मान कर निरर्थक कर देते हैं।

भक्ति काव्य को नकारने का दूसरा कारण है कि एकांगी दृष्टि –सम्पन्न साहित्य अध येताओं को वर्तमान में अतीत के काव्य पर बात करना अपराध बोध का भाव जगाने जैसा लगता है। तीसरा कारण है कि कुछ हिन्दीतर भाषी यह चाहते हैं कि हिंदी साहित्य को खड़ी बोली के साहित्य तक सीमित रहने दिया जाए। हिंदी के नाम पर खड़ी बोली के साथ अवधी, ब्रज, मैथिली आदि के पढ़ने पर भ्रमात्मक स्थिति बनती है। ब्रज, अवधी का कठिन लगना भी अन्य कारण है। भक्ति–काव्य को अनुपयोगी मानने के ये सभी तर्क संकुचित विचारधारा से जनित होने के कारण अमान्य सिद्ध हो जाते हैं ।

साहित्य का अध्ययन निरन्तरता में होता है। हिंदी के साहित्य के आधुनिक युग को समझने के लिए मध्यकाल को समझना आवश्यक है। टी0एस0इलियट ने कहा था – "सारा साहित्य अब तक छन करके छनता हुआ आज तक जो पहुॅचा है ,वह सब वर्तमान है। उसे वर्तमान का आज का मानकर पढ़ना चाहिए।" 1 अतीत में जाना अपराध–बोध नहीं वरन् अपनी परम्परा में, संस्कृति की जड़ों में जाना है। भक्ति काव्य हताश जनता की कुण्ठाग्रस्त अभिव्यक्ति नहीं, वरन् तत्कालीन राजनैतिक, आर्थिक, सामाजिक स्तर पर अत्यंत विषम परिस्थितियों से उत्पन्न हुई क्षरित जीवन मूल्यों के प्रति लोक की आस्था जगाने वाला, अंधकारपूर्ण मानसिकता को प्रकाशमान बनाने वाला काव्य है जो हर काल व देश की सीमाओं को तोड़ता हुआ कालजयी साहित्य है। आज भी भारतीय जन–मानस के हृदय और जिह्वा पर सूर, कबीर, तुलसी, मीरा आदि के शब्द गूंजते हैं। उनके लिए वही वर्तमान साहित्य है। नए बाजारवाद के युग में तुलसी, कबीर जैसे महान कवियों पर चिन्तन साहित्य सुधियों द्वारा अपेक्षित ही नहीं, नितान्त आवश्यक भी है ।

भक्तिकालीन काव्य में इतनी प्रकृष्टता भरी हुई है कि उसके कतिपय बिन्दुओं के संस्पर्श से ही वर्तमान परिप्रेक्ष्य में उसकी महत्ता स्वतः सिद्ध हो जाती है।

भक्ति–काल का सबसे बड़ा वैशिष्ट्य यह है कि जितना समृद्ध, व्यापक व उत्कृष्ट काव्य भक्ति काल में रचा गया, उतना आधुनिक भाषाओं में अन्य किसी भाषा का नहीं है। हम हिंदी भाषी इस पर अत्यन्त गौरवान्वित हैं। निर्गुण संतो ंके अनेक सम्प्रदाय हैं। राम और कृष्ण निर्गुण में भी हैं तथा सगुण में भी। एक ओर निर्गुण सगुण हैं तो दूसरी ओर राम और कृष्ण भक्ति शाखाओं में विभिन्न सम्प्रदाय हैं। इसके अतिरिक्त चार पांच सौ वर्ष पुरानी परम्परा से युक्त सूफी काव्य है। भक्ति का आरम्भ ही सूफी काव्य से हुआ है। 2 इस प्रकार हमारे पास भक्ति की वह विशाल सम्पत्ति है जो आधुनिक भारतीय भाषाओं में नहीं है। भारत की आधुनिक भाषाओं के व्यक्तित्व, चरित्र एवं आस्मिता को प्रथम बार परिभाषित करने वाली भक्ति ही है।

दूसरा बड़ा वैशिष्ट्य यह है कि मानवीय मूल्यों का जो प्रकर्ष भक्तिकालीन कविता में मिलता है, वह अन्यतम है। भक्त कवियों का मुख्य प्रतिपाद्य मानवीय सामाजिक चिंता थी। उनकी दृष्टि में मानव–मात्र का विकास करने वाले तत्व ही मानव–मूल्य हैं तथा यही सर्वोपरि हैं। त्याग, निरभिमानता, परोपकार, दया, करूणा, क्षमाशीलता, सत्य, अहिंसा, प्रेम आदि भावनाओं का उदात्त रूप ही मनुष्य का कल्याण कर सकता है। दादू कहते है –

दया धर्म का रूखड़ा, सत सो बढ़ता जाइ

संतोष सो फूले फलै, दादू अमर फल खाइ 3.

कबीर क्षमाशीलता का प्रबोध देते है :–

"जो तोको कॉटा बुवै, ताहि बोइ तू फूल। तुलसी भी कहते है :–

"परहित सरिस धरम नहीं भाई, परपीड़ा नहीं सम अधमाई"

समूचे भक्ति साहित्य का प्रस्थान इसी ओर है कि मनुष्य–मनुष्य के मध्य उत्पन्न होने वाली भेदवादी दर्षष्टि को समूल नष्ट कर दिया जाए। इसीलिए उसमें एक जाति एक वर्ण ,एक धर्म के लिए सामाजिक व्यवस्था का निर्माण करते हुए विसंगतियों को ललकारा गया है। चरनदास कहते है कि जन्मना न तो कोई ब्राहमण है, न कोई शूद्र। ब्राहमण वह है जो ब्रहम को पहचानता है।"

"ब्राहमण सो जो ब्रहम पिछानै"। पलटू भी यही कहते है। :–

पलटू ब्राहमन है बड़ा, जो सुमिरै भगवान

बिना भजन भगवान के, ब्राहमण ठेठ समान 5.

भक्ति काव्य में संतो और सूफी कवियों में सर्वधर्म समभाव दिखाई देता है। उनके अनुसार हिन्दू और मुस्लिम धर्म एक बगीचे के अलग–अलग फूलों के समान है। समाजिक समरसता का बोध कराने वाले ये मूल्य मध्यकाल की ही नहीं वरन् धार्मिक उन्माद में झुलस रहे आज के समाज की भी आवश्यकता हैं। आज भी हम जिस सामाजिक उन्नति ,सामाजिक आदर्श व्यवस्था तक नही पहुंच पाए, यह भक्ति काव्य उस शिखर तक पहुंचा हुआ दिखाई देता है।

भक्त कवि जिन मानवीय भावों को लोकधर्म का आधार बनाकर समाज में मनुष्यत्व की भावना का विकास करना चाहते थे उनमें सबसे अधिक व्यापक और गहन भाव है प्रेम। यही भक्ति का मूल भाव है और समस्त भक्ति काव्य का केन्द्रीय भाव भी सभी कवि प्रेम को मनुष्यता का सबसे बड़ा सत्य मानते थे। उनमें "मानुष प्रेम भएउ बैकुंठी, नाहीं न काह छार भरि मुटठी " कहने वाले जायसी भी थे, "राम सखा रिसि बरबस मेरा, जनु महि लुठत सनेह समेटा" कहकर प्रेम की अभिव्यक्ति करने वाले तुलसी भी थे और कबीर भी थे ,जिन्होने कहा – "अकथ कहानी प्रेम की ,कछु कही न जाई, गूँगे केरी सरकरा, बैठे मुसकाइ।"

सूर भी स्पष्ट कहते है :– "प्रेम प्रेत ते होई , प्रेम परमारथ पइयो, प्रेम बंध्यो संसार।" जायसी, सूर, मीरा की प्रेमानुभूति शास्त्र के भ्रम और लोक के भय से मुक्त मानवीयता के विकास में सहायक है। "पदमावत" की कथा में अलाउद्दीन के विध्वंस तथा पदमावती की चिता की राख द्वारा जायसी संकेत देते है कि धार्मिक उन्माद पर प्रेम ही मानवीय मूल्यों की रक्षा कर सकता है ।

प्रेम का जब सामाजीकरण होता है तब वह भक्ति बन जाता है। इन कवियों की भक्ति शांतिमय वैयक्तिक अनुभूति थी। विभिन्न भेदों, विसंगतियों वाले तत्कालीन समाज में भक्ति सबको जोड़ने वाली थी, जो भिन्न मतों के होने के बाद भी उन सबके ऊपर थी। भक्ति साहित्य का उदय एक सुनियोजित आन्दोलन के रूप में था। वह सांस्कृतिक अस्मिता के लिए चुनौती भरा संकट का काल था। तब वल्लभाचार्य ने कहा – "कृष्णैवमतिर्मम्। रामानंद भक्ति का दूसरा स्त्रोत लेकर आए। बंगाल में चैतन्य महाप्रभु, तेलगु में पोतना, उड़ीसा में सरलादास, आसाम में शंकरदेव, गुजरात में नरसी मेंहता, पंजाब में नानक देव, महाराष्ट्र में ज्ञानेश्वर, नामदेव, तुकाराम, मध्य क्षेत्र में कबीर, दादू, रैदास, पलटू आदि सब भक्ति की विभिन्न धाराओं को लेकर आए लेकिन सबका केन्द्र बिंदु लोकहित था।

एक अन्य बडी विशेषता भक्तिकाव्य की यह है कि आधुनिकता बोध के अंकुर भी मध्ययुगीनता के साथ ही इसमें प्रस्फुटित होते हैं। आधुनिकता का जो मूल तत्व है – प्रत्यय बोध के आधार पर किसी वस्तु को ह्रदयंगम करने का आग्रह–संत साहित्य में पहली बार दिखाई देता है। वैज्ञानिक दृष्टि वह है जिसमें तर्क व प्रमाण के आधार पर देख परख कर किसी भाव, वस्तु को समझा, स्वीकारा जाता है। आधुनिकता की इस दृष्टि का सूत्रपात संत काव्य से ही है। सभी भक्त एवं संत कवियों ने आत्मानुभूति को ही अपनी अभिव्यक्ति दी है। "तू कहता कागद की लेखी, हौं कहता आंखिन की देखी"। विशेष बात यह है कि ऐसी आत्मानुभूति को कहने वाले प्रायः सभी संत कवि समाज के उस उपेक्षित वर्ग में से उठ खडे हुए थे जिन्हे दलित कहा जाता है। संत काव्य दलितों द्वारा रचा गया साहित्य है जिनमें सुन्दरदास, मलूकदास, चरणदास आदि कसाई, लुनिया, जुलाहा है। आज साहित्य में दलित विमर्श, स्त्री विमर्श चर्चा में है। भक्ति काव्य इस संदर्भ में प्रासंगिक है।

भक्ति–काव्य में स्त्री के प्रति सहानुभूति हमें मिलती हैं पार्वती की मॉ मैना शिव से विवाहोपरान्त जब उसे विदा करती है तो तुलसी पार्वती के बहाने से आम स्त्री के त्रासद जीवन की रूपरेखा स्पष्ट कर देते है :– "कत विधि सृजी नारि जब माही, पराधीन सपने हुॅं सुख नाही"। सहानुभूति के साथ ही पितृसत्तामक समाज होते हुए भी नारी शिक्षा और नारी स्वतंत्रता पर भक्त कवियों ने बल दिया। पद्मावती सुन्दरी होने के साथ ही वेदशास्त्रों की ज्ञानी है पद्मावती को जिस प्रकार अपनी स्वतंत्रता के लिए अमानवीयता के प्रतीक अलाउद्दीन से बुद्धि बल पर लड़ते तथा अंत में हार कर भी विजयी होते हुए दिखाया है , वह निश्चय ही आधुनिक सामाजिक परिवेश में अत्यंत उल्लेखनीय है। इसी प्रकार मीराबाई कृष्ण के लिए जहॉ आत्मसमर्पण करती है वही सामंती शक्तियों, रूढ़ियों तथा परम्पराओं से सामना करने की शक्ति भी अपने अटूट प्रेम के कारण पाती है। उनकी निर्भीक एवं निर्द्वन्द्व आत्माभिव्यक्ति है – "राजा रूठै नगरी राखै ,हरि रूठया कहॅं जाणा"। क्या ये उदाहरण स्त्री विमर्श, स्त्री अस्मिता की रक्षा के बीज भक्ति काव्य में होने का संकेत देने के लिए पर्याप्त नहीं है ?

भक्ति–काव्य के एक अन्य वैशिष्ट्य पर मै ध्यान आकर्षित करना चाहूॅंगी। उसमें जो संगीतात्मकता, गेयता है, वह अद्भुत है। संगीत द्वारा हमारी आध्यात्मिक प्रवषत्ति को विकसित किया जाता है। उसमें इसकी अद्भुत क्षमता है। भक्ति –काव्य ने जन–साधारण में शील निर्माण, मूल्यों का प्रसार तथा सौन्दर्य का संस्कार संगीतात्मकता के माध्यम से किया।

भक्ति–काव्य में संप्रेष्य वस्तु के वैशिष्ट्य के अतिरिक्त कलात्मक सौन्दर्य बोध भी विलक्षण है। इसमें भाषा का कौशल अद्भुत है। सूर के कूट पद, कबीर की उलटवासियां उनके ज्ञान एवं लालित्य बोध का ही परिचायक है। भाषाई सौहार्द भी भक्ति–काव्य में दर्शनीय है। कबीर तो पंचमेल खिचड़ी भाषा के कवि थे, साथ ही अन्य कवियों में किसी की भाषा अवधी है तो किसी की ब्रज। बुंदेली, भोजपुरी, पंजाबी का भी पुट है। कुछ प्रभाव राजस्थानी का भी है। इन कवियों का ध्येय जनता का हित जनता की भाषा में करने का था। इसके लिए कबीर तो बिल्कुल मुक्त शैली में शब्दों को गढ़ते चलते है।

कहा जा सकता है कि भक्ति–काव्य में आशा, प्रेरणा एवं प्रेम की अजस्र धारा है, जो सबके लिए सार्थक है। वर्तमान संदर्भ में सार्थक इसलिए है कि हमें वर्तमान संघर्षो से जूझना है। वर्तमान संघर्षो से तात्पर्य है :– अशान्ति, असुरक्षा, भ्रष्टाचार, अंधविश्वास, धनाभाव आदि। यदि हमें इनसे ऊपर उठना है तो अपने जीवन–मूल्यों की ओर जाना होगा जिससे इनकी अर्थवत्ता में कमी आए। इसके लिए भक्ति–काव्य ,संत साहित्य की प्रवषत्ति को स्वीकार करना होगा।

"वसुधैव कुटुम्बकम" की बड़ी सार्थक एवं सम्पूर्ण कल्पना भक्त एवं संत कवियों में मिलती है। वर्तमान संघर्ष के लिए इसे आज भी हम मूल्य के रूप में ग्रहण कर सकते है क्योकि आज धर्म मनुष्य के ऊपर सवार होकर उसे साम्प्रदायिकता, पाखण्डों एवं आडम्बरों की ओर ले जा रहा है, ऐसे समय में भक्त कवियों की वह विचारधारा, जो कष्ट सहकर भी पाखण्डों, आडम्बरों का विरोध करती है ,अत्यंत प्रासंगिक है।

कोई भी रचना आज के संदर्भ में तभी सार्थक व प्रासंगिक हो सकती है जब वह सत्यनिष्ठा के साथ स्वानुभूति की सहज अभिव्यक्ति करें, जब उसकी रचना धर्मिता, मानवीय मूल्यों के संरक्षण से जुड़ी हो, इस दृष्टि से भक्ति–काव्य की महत्ता अक्षुष्ण है मानवीय मूल्यों के संरक्षण की दृष्टि से, सामाजिक समरसता की दृष्टि से,जातीय अस्मिता की दृढ़ता की दृष्टि से, कला–कौशल की दृष्टि से तथा वस्तु की दृष्टि से भक्ति–काव्य साध्य है ।

समस्त भारतीय चिंतन, वेद–उपानिषद से लेकर सारी ज्ञान साधना, अपनी पुरानी संपदा को जानने के लिए हमारे पास एक ही स्त्रोत है–भक्ति–साहित्य। इसके न रहने पर हम अपनी विशाल संपदा को खो देंगे। मानवीय संवेदनाएं एवं भावनाएं सार्वकालिक तथा सार्वभौमिक होती है। जिस काव्य में उनके अनेक आयाम सम्पूर्ण सौन्दर्य –बोध के साथ उद्घाटित हुए हो, वह काव्य कैसे अर्थहीन हो सकता है। जब तक मनुष्य रहेगा, जब तक उसकी चेतना बनी रहेगी, हमारे वर्तमान संघर्षो से जूझने का मार्ग भावनाओं की कोमलता एवं स्निग्धता में पाया जा सकता है जो भक्ति साहित्य में मिल सकता है। हमें तो गौरवान्वित होता चाहिए कि हमारे भक्ति काव्य का वैविध्य भारतीय संस्कषति का ही वैविध्य है। भक्ति काव्य इतना बहुरंगी है , उसमें इतनी तरह ही रंगीनियां है,यें उसकी समषद्धि का सश्श्श्श्शूचक है। इस व्यापकता, विविधता तथा बहुलता को रेखांकित करने से ही हम हिन्दी भक्तिकाव्य के वास्तविक स्वरूप की रक्षा आधुनिक भारतीय भक्ति–काव्य में कर सकेंगे और उसे सदैव सार्थक एवं प्रासंगिक बना सकेंगे ।

संदर्भ

1. प्रो0 नामवर सिंह , "भक्ति–काव्य और वर्तमान समय " सम्पादक डॉ0 रतन कुमार पाण्डेय , पृ0 16 से उद्घष्त ।
2. प्रो0 नामवर सिंह , "भक्ति–काव्य और वर्तमान समय " सम्पादक डॉ0 रतन कुमार पाण्डेय , पृ0 20से उद्घष्त ।
3. दादू , संत वाणी संग्रह पृष्ठ 148 ,डॉ वासुदेव सिंह "हिंदी संत काव्यःसमाज शास्त्रीय अध्ययन, पृ0 300 से उद्घष्त ।
4. चरणदास , संत वाणी संग्रह पृष्ठ 88 ,डॉ वासुदेव सिंह "हिंदी संत काव्यःसमाज शास्त्रीय अध्ययन, पृ0 291 से उद्घृत ।
5. पलटू की वाणी–भाग 3, पृष्ठ 79, डॉ वासुदेव सिंह "हिंदी संत काव्यःसमाज शास्त्रीय अध्ययन, पृ0 291 से उद्घृत ।